संविधान संवाद शृंखला - 7

संविधान की रचना प्रक्रिया

विकास संवाद

शीर्षक

संविधान की रचना प्रक्रिया

(संविधान संवाद शृंखला - 7)

लेखक

सचिन कुमार जैन

संपादन सहयोग

पूजा सिंह, राकेश कुमार मालवीय,
रंजीत अभिज्ञान, पंकज शुक्ला

संस्करण - प्रथम

वर्ष - 2023

प्रतियां - 1000

सहयोग राशि
छात्रों के लिए - ₹ 20
नागरिकों के लिए - ₹ 25
संस्थाओं के लिए - ₹ 30

मुद्रक - अमित प्रकाशन

सज्जा - अमित सक्सेना

प्रकाशक

विकास संवाद

ए-5, आयकर कॉलोनी, जी-3, गुलमोहर कॉलोनी,
बावड़िया कलां, भोपाल (म.प्र.) - 462039. फोन : 0755-4252789
ई-मेल : office@vssmp.org / www.vssmp.org
www.samvidhansamvad.org

संविधान की रचना प्रक्रिया

भारतीय संविधान के निर्माण की पृष्ठभूमि को समझने के बाद यह जरूरी है कि हम संविधान के निर्माण की, उसकी रचना की प्रक्रिया को समझें। हमारे संविधान के पीछे कितनी मेहनत हुई है और उसके प्रावधानों ने कैसे हमें एक सुरक्षित वातावरण दिया है, इसे जानने के लिए संविधान निर्माण की प्रक्रिया को जानना होगा।

''लोग कहते हैं कि साधन तो साधन ही है। मैं तो कहता हूं कि साधन ही सब कुछ है। जैसे साधन होंगे, वैसा ही साध्य (परिणाम) होगा। सृष्टिकर्ता ने हमें साधनों पर ही सीमित नियंत्रण दिया है, साध्य पर तो कोई नियंत्रण दिया ही नहीं है। लक्ष्य उतना ही शुद्ध होता है, जितने हमारे साधन शुद्ध होते हैं। अगर हम हिंसा से स्वराज्य हासिल करेंगे तो वह भी हिंसापूर्ण ही तो होगा और दुनिया के लिए तथा खुद भारत के लिए भय का कारण सिद्ध होगा। गंदे साधनों से मिलने वाली चीज़ भी गंदी ही होगी, इसलिए राजा को मारकर राजा और प्रजा एक से नहीं बन सकेंगे। मालिक का सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं हो सकेंगे।''

– महात्मा गांधी

महात्मा गांधी का यह वक्तव्य भारत की आजादी के साथ-साथ भारतीय संविधान के निर्माण की पूरी प्रक्रिया पर भी सटीक ढंग से लागू होता है। भारतीय संविधान को देखकर यह जाना जा सकता है कि तत्कालीन भारतीय समाज और उसके बुद्धिजीवी कितने समझदार और परिपक्व थे।

संविधान लेखन और तत्कालीन परिस्थितियां

जिस समय संविधान सभा में संविधान लिखा जा रहा था, उसी वक्त भारत और पाकिस्तान का विभाजन हो रहा था, देश के कई हिस्सों में सांप्रदायिक दंगे हो रहे थे, सांप्रदायिकता का ज्वार पूरे उभार पर था। वैश्विक परिस्थितियां भी अनुकूल नहीं थीं। दूसरा विश्वयुद्ध चल रहा था। लेकिन आसपास इतना सब कुछ घटित होने के बावजूद संविधान निर्माता समूह विचलित नहीं हुआ। ऐसा क्यों हुआ?

दरअसल हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन के नैतिक मूल्य इतने प्रभावी थे कि हमारे संविधान निर्माताओं ने एक बार भी सैनिक शासन, तानाशाही या कट्टरपंथी मज़हबी राष्ट्र होने के विकल्प के बारे में नहीं सोचा। वैश्विक अशांति के उस माहौल में बने संविधान में भी विश्वशांति, गरिमा और समता आधरित भारत की संकल्पना ही की गयी।

विभाजन और हिंसा के उस झंझावात में भी भारत के संविधान में लिखा गया कि छुआछूत नहीं होगी, भारत में रहने वाले हर व्यक्ति को अपनी पसंद के अनुसार धर्म अपनाने और प्रार्थना करने का अधिकार होगा, हर व्यक्ति को गरिमा के साथ जीवन जीने, देश में कहीं भी आने-जाने, अपनी बात कहने की स्वतंत्रता होगी और सामाजिक-आर्थिक न्याय का अधिकार होगा। भारत अत्यंत कठिन वैश्विक और आंतरिक हालात के बीच भी इंसाफ, बराबरी, प्रेम, लोकतंत्र, सौहार्द, स्वतंत्रता और सह-अस्तित्व के मूल्यों को जोड़कर अपना संविधान बना रहा था।

वर्ष 1895 से लेकर वर्ष 1946 तक आजाद भारत की संकल्पना गढ़ने के लिए विभिन्न बुद्धिजीवियों और राजनेताओं ने कुल 13 प्रकार के प्रारूप बनाये। इन प्रारूपों में स्वतंत्र भारत की व्यवस्था की रूपरेखा परिकल्पित की गयी थी। ध्यान रहे कि इन 13 दस्तावेजों में से किसी में भी भारत में तानाशाही, धर्म आधारित राष्ट्र, जातिवादी व्यवस्था की संकल्पना नहीं की गयी थी। हर स्वप्नदृष्टा ने भारत को एक लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में ही देखा।

संवैधानिक मूल्य और हम

संविधान के मूल्यों पर बार-बार बात होनी चाहिए ताकि इस भ्रम को तोड़ा जा सके कि भारत के संविधान में दर्ज मूल्य भारत के अध्यात्मिक मूल्यों से असंगत हैं। क्या भारतीय आध्यात्मिक परम्पराओं में न्याय नहीं है, करुणा और बंधुत्व नहीं है, प्रेम और सद्भाव नहीं है, अहिंसा नहीं है, स्वतंत्रता नहीं है? यही तो भारतीय संवैधानिक व्यवस्था के मूल स्तम्भ हैं।

डॉ. अम्बेडकर की चिंताएं

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा था कि विरोधाभासों से भरे हमारे देश में लोकतंत्र और समतामूलक समाज की स्थापना का स्वप्न देखना आसान नहीं है। उन्होंने प्राचीन भारत के लोकतंत्रों को याद किया और भविष्य को लेकर चेतावनी भी दीं:

'ऐसा नहीं है कि भारत में लोकतंत्र न था, एक समय था, जब भारत गणराज्यों से सुसज्जित था...भारत से यह लोकतंत्रात्मक व्यवस्था मिट गयी है....लोकतंत्र के एक लंबी अवधि से अप्रयुक्त रहने के कारण इसे नयी वस्तु माना जा रहा है। यह भी संभव है कि नवजात लोकतंत्र अपना स्वरूप बनाये रखे लेकिन वास्तव में अपने स्थान पर तानाशाही की स्थापना कर दे.....राजनैतिक जीवन में हम एक व्यक्ति के लिए एक मत और एक मत का एक ही मूल्य के सिद्धांत को मानेंगे, लेकिन सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में हम एक व्यक्ति, एक ही मूल्य के सिद्धांत का खंडन करते रहेंगे.....स्वाधीनता खुशी का विषय है, पर हम यह न भूलें कि स्वाधीनता ने हमारे ऊपर महान उत्तरदायित्व डाले हैं। अब हमारे पास किसी त्रुटि के लिए अंग्रेजों पर दोष डालने का बहाना नहीं रहा। यदि अब कोई त्रुटि होती है तो हम किसी अन्य को दोष नहीं दे सकते हैं।'

-डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

संविधान पारित होने के एक दिन पहले यानी 25 नवम्बर 1949 को संविधान प्रारूप समिति के सभापति डॉ. अम्बेडकर ने ब्रिटिश दार्शनिक जान स्टुअर्ट मिल के हवाले से लोकतंत्र बनाये रखने के लिए एक सावधानी बरतने की सलाह दी थी –

'मिल ने कहा था– किसी भी महान व्यक्ति के चरणों में अपने स्वातंत्र्य को चढ़ा न दें या उसे वे शक्तियां न सौंपें, जो उसे उन्हीं की संस्थाओं को मिटाने की शक्ति दे। महान व्यक्तियों के प्रति, जिन्होंने जीवन पर्यंत देश की सेवा की हो, कृतज्ञ होने में कोई बुराई नहीं है, पर कृतज्ञता की भी सीमा है। किसी अन्य देश की अपेक्षा भारत के लिए यह चेतावनी अधिक आवश्यक है क्योंकि भारत में भक्ति या जिसे भक्ति मार्ग या वीर पूजा कहा जाता है। उसका भारत की राजनीति में इतना महत्वपूर्ण स्थान है जितना किसी अन्य देश की राजनीति में नहीं है। धर्म में भक्ति आत्म–मोक्ष का मार्ग हो सकता है, पर राजनीति में भक्ति या वीर–पूजा पतन तथा अंतत: तानाशाही का एक निश्चित मार्ग है।'

– डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

संविधान सभा का स्वरूप

भारत के संविधान के निर्माण की प्रक्रिया आदर्श न सही, लेकिन बहुत महत्वपूर्ण है। जब संविधान सभा का गठन हुआ तब प्रांतीय सभाओं से 292, रियासतों से 92 और मुख्य आयुक्तों के प्रान्तों से 4 प्रतिनिधि मिलाकर कुल 389 सदस्यीय सभा बनी थी। लेकिन मुस्लिम लीग के सदस्य संविधान सभा से अनुपस्थित रहे। माउंटबेटन योजना के अनुसार 3 जून 1947 को पाकिस्तान के संविधान के लिए अलग सभा के गठन की बात हुई और बंगाल, पंजाब, सिंध, पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत, बलूचिस्तान और असम का सिलहट जिला (जनमत संग्रह द्वारा

पाकिस्तान में शामिल) इससे हट गये। पश्चिम बंगाल और पूर्वी पंजाब में दोबारा निर्वाचन कराया गया। इसके बाद 31 अक्टूबर 1947 को जब भारत की संविधान सभा दोबारा जुटी तो उसके सदस्यों की संख्या घटकर 299 रह गयी। इनमें 15 महिलायें और अनुसूचित जाति के 30 सदस्य भी शामिल थे।

देश का भूगोल और संविधान सभा

तत्कालीन भारत कई छोटी-छोटी रियासतों में बंटा हुआ था। अगर उन्हें साथ नहीं लिया जाता तो भारत का स्वरूप ही कुछ और होता। उनमें वर्तमान मध्य प्रदेश की चार रियासतें इंदौर, भोपाल, रीवा और ग्वालियर भी शामिल थीं। अंतरिम सरकार ने 29 रियासतों और रियासत समूहों को संविधान सभा में शामिल होने के लिए तैयार किया जो अत्यंत महत्वपूर्ण कदम था।

31 दिसंबर 1947 तक विभिन्न प्रांतों में संविधान सभा के सदस्यों की संख्या इस प्रकार थी। 299 सदस्यों में मद्रास प्रांत के 49, बम्बई प्रांत के 21, पश्चिम बंगाल के 19, संयुक्त प्रांत के 55, पूर्वी पंजाब के 12, बिहार के 36, मध्यप्रांत और बरार के 17, असम के 8, ओडिशा के 9, दिल्ली, अजमेर और कूर्ग के 1-1 सदस्य शामिल थे। ये कुल 229 सदस्य हुए। शेष 70 सदस्य विभिन्न रियासतों से लिए गये।

जिन रियासतों से संविधान सभा के अन्य 70 सदस्य लिए गये वे थीं: अलवर, बड़ौदा, भोपाल, बीकानेर, कोचीन, ग्वालियर, इंदौर, जयपुर, जोधपुर, कोल्हापुर, कोटा, मयूरभंज, मैसूर, पटियाला, रीवा, ट्रावनकोर, उदयपुर, सिक्किम और कूच बिहार, त्रिपुरा, मणिपुर और खासी समूह, उत्तरप्रदेश समूह, पूर्वी राजपुताना राज्य समूह, मध्य भारत राज्य समूह, गुजरात राज्य समूह, दक्कन और मद्रास राज्य समूह, पंजाब राज्य समूह, पूर्वी राज्य समूह (एक और दो), अवशिष्ट राज्य समूह।

24 जनवरी 1950 को संविधान सभा के 284 सदस्यों ने संविधान की तीन प्रतियों पर हस्ताक्षर (जिनमें हिंदी और अंग्रेजी की एक-एक हस्तलिखित प्रतियां शामिल थीं) किए।

संवाद से उपजा संविधान

दुनिया भर में यह एक मान्य सिद्धांत है कि संवाद बड़ी से बड़ी समस्याओं और दुविधाओं को हल कर सकता है, चाहे दो व्यक्तियों के बीच में हों, समुदायों के बीच में हों या फिर दो राष्ट्रों के बीच में। भारतीय संविधान के निर्माण की प्रक्रिया में भी संवाद की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही।

पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च (इंस्टीट्यूट फॉर पॉलिसी रिसर्च) ने अपने अध्ययन में संविधान सभा की बहस को एक नयी दृष्टि से देखा; उसके मुताबिक:

- 165 बैठकें हुईं संविधान सभा के गठन (9 दिसंबर 1946) से संविधान लागू किए जाने (26 जनवरी 1950) तक।
- 46 दिनों तक संविधान पर शुरुआती चर्चा हुई।
- 101 दिनों तक प्रारूप पर अनुच्छेदवार दूसरी चर्चा हुई।
- 16 दिनों तक मूल अधिकारों पर, जबकि 4 दिनों तक नीति निर्देशक तत्वों पर चर्चा की गयी इस दूसरी चर्चा के दौरान।
- 13 दिन लगे संविधान के प्रारूप पर तीसरी बार चर्चा करने में, जबकि शुरुआती प्रस्तावों पर 5 दिनों तक चर्चा हुई।

मसौदा समिति

29 अगस्त को संविधान मसौदा समिति बनायी गयी थी। इसने 141 दिनों तक काम किया। इस दौरान समिति की 42 बैठकें हुईं। मसौदा समिति द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज पर जमकर बहस हुई और इस दौरान एक या दो नहीं, बल्कि पूरे 7,635 संशोधन प्रस्ताव पेश किए गए। इनमें से 2,473 संशोधनों को स्वीकार भी कर लिया गया।

संविधान सभा में बोले गये शब्द : कुछ रोचक तथ्य

पीआरएस ने अपने अध्ययन में संविधान सभा की बहसों के दौरान बोले गये शब्दों को लेकर कुछ रोचक तथ्य जुटाए हैं:

- 36 लाख शब्द बोले गये संविधान सभा की बहसों में।
- 24 लाख से अधिक शब्द अनुच्छेद पर चर्चा के दौरान बोले गये, तब जब संविधान दूसरी बार पढ़ा जा रहा था।
- 2,67,644 शब्द बोले मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने।
- 1,88,749 शब्द बोले एच.वी. कामत ने।
- 97,628 शब्द बोले मसौदा समिति के दूसरे सदस्य टी.टी. कृष्णमाचारी ने।
- 73,804 शब्द बोले जवाहरलाल नेहरू ने।
- 61,162 शब्द बोले अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने।
- 60,056 शब्द बोले के.एम. मुंशी ने।

संविधान सभा की महिला सदस्य

संविधान सभा की पूरी अवधि के दौरान 15 महिलायें उसकी सदस्य रहीं। इन महिलाओं ने भी सभा की बैठकों में अपनी बात रखी।

22,905 शब्द बोले जी. दुर्गा बाई ने।

10,480 शब्द बोले बेगम एजाज रसूल ने।

10,312 शब्द बोले रेणुका राय ने।

9,013 शब्द बोले पूर्णिमा बनर्जी ने।

सिर्फ बोला नहीं, 'कहा' भी

संविधान सभा के सदस्यों द्वारा इतना बोलने से सहज अनुमान यही लगाया जा सकता है कि वहां राजनीतिक भाषण जैसा कुछ घटित होता होगा। यह बात सही नहीं है। संविधान सभा के सदस्यों द्वारा बोले जाने वाले ये शब्द वर्तमान राजनीतिक भाषणों की तरह बिल्कुल नहीं थे, बल्कि ये इसलिए हुआ क्योंकि संविधान में शामिल होने वाले एक-एक शब्द को लेकर कई-कई दिनों तक लंबी चर्चाएं चलीं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि संविधान निर्माता संविधान में शामिल की जा रही बातों को लेकर कितने गंभीर थे। कहा जा सकता है कि संविधान सभा के सदस्यों ने सिर्फ बोला नहीं बल्कि बहुत कुछ 'कहा' जो काम का था।

भारतीय संविधान पर वित्तीय व्यय

संविधान सभा ने 26 नवम्बर 1949 को संविधान को मंजूरी दी। उसी दिन सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने सभा को बताया कि 22 नवम्बर 1949 की तारीख तक संविधान सभा पर लगभग तीन वर्षों में 63,96,729 रुपये का खर्च आया। भारतीय संविधान सभा वित्तीय मामलों में पूरी तरह जवाबदेह और पारदर्शी थी।

संविधान को अंगीकृत करने की तारीख

भारतीय संविधान भले ही 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ, किंतु नागरिकता, निर्वाचन और अंतरिम संसद से संबंधित उपबंधों तथा अस्थायी एवं संक्रमणकारी उपबंधों को तत्काल यानी 26 नवंबर 1949 को ही लागू कर दिया गया था। शेष

संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। 26 जनवरी की तारीख इसलिए चुनी गयी क्योंकि सन 1930 में इसी तारीख को लाहौर में रावी नदी के तट पर पूर्ण स्वराज की घोषणा की गयी थी।

दुनिया के संविधान और भारतीय संविधान

भारतीय संविधान में 395 अनुच्छेद थे। जबकि अमेरिकी संविधान में केवल सात अनुच्छेद हैं जिनमें से शुरुआती चार को 21 धाराओं में बांटा गया है। कनाडा के संविधान में 147, ऑस्ट्रेलिया के संविधान में 128 और दक्षिण अफ्रीका के संविधान में 159 अनुच्छेद हैं।

यहां यह जानना महत्वपूर्ण है कि अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया या दक्षिण अफ्रीका में संविधान बनाने वालों को संशोधनों या बहसों का सामना नहीं करना पड़ा। उनके यहां अनुच्छेद और धाराओं को यथारूप स्वीकार कर लिया गया।

कौन सा संविधान कितने समय में बना?

- अमेरिकी संविधान – चार माह
- कनाडा का संविधान – दो वर्ष पांच माह
- ऑस्ट्रेलिया का संविधान – नौ वर्ष
- दक्षिण अफ्रीका का संविधान – एक वर्ष
- भारत का संविधान – दो वर्ष 11 माह तथा 17 दिन

संविधान का क्रियान्वयन

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और डॉ. बी.आर. अम्बेडकर समेत संविधान सभा के कई सदस्यों ने यह बात दोहरायी थी कि संविधान चाहे कैसा भी हो, उसका क्रियान्वयन तो हमारे नेताओं और प्रतिनिधियों को ही करना है। यदि लागू करने वाले भ्रष्ट, फासीवादी, सांप्रदायिक और अनैतिक हों, उनकी मंशा और चरित्र सही न हो तो संविधान कितना भी अच्छा हो, उसका निष्फल होना तय है।

यदि भारतीय संविधान के महत्व को सही अर्थों में समझना हो तो संविधान सभा की बहसों को पढ़ना अनिवार्य है। सभा के विचारों में तथा विभिन्न प्रस्तावों को लेकर आपस में गंभीर मतभेद थे। इन मतभेदों को दूर करने के लिए खूब बहस हुई, संवाद हुआ और ज्यादातर मामलों में सहमति स्थापित करने में कामयाबी मिली। ऐसे में संविधान सभा की बहसों को अच्छी तरह जाने बिना संवैधानिक प्रावधानों की महत्ता स्थापित कर पाना कठिन होगा।

संवैधानिक मूल्यों पर देना होगा जोर

> आज हम सब एक ऐसे दौर में जी रहे हैं, जब सत्ताओं ने भय को अपना हथियार बना लिया है। हमारी राजनीति ने समाज में धर्म और जाति के आधार पर भेद पैदा कर दिया है। इससे भारत के संवैधानिक स्वरूप को खतरा उत्पन्न हो गया है। अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों दोनों को भयभीत करके समाज में स्थायी टकराव की भूमिका रची जा रही है।

यह इसलिए संभव हुआ क्योंकि स्वतंत्रता के बाद हमने लगातार 'संवैधानिक मूल्यों' से ज्यादा जोर वोट को देना शुरू कर दिया। यह विडंबना ही है कि आजादी के इतने वर्ष बाद भी हमारे समाज की ज्यादातर व्यवस्थाएं संवैधानिक मूल्यों के खिलाफ हैं।

> हमारे राजनीतिक दलों और सरकारों ने भी इसी व्यवस्था का पोषण किया क्योंकि इसमें उन्हें अपना हित नजर आया। अगर समाज ने संविधान को सर्वोच्च दर्जा दिया होता तो देश का हर बच्चा शिक्षित भी होता, हर व्यक्ति के पास काम होता, विविध धर्मों के बीच सर्वोच्चता का संघर्ष नहीं होता और हम छुआछूत–असमानता के भंवरजाल से निकल पाते।

हम कभी यह स्वीकार नहीं कर पाये कि भारत भाषा, समुदायों, संस्कृति, मजहबों, रहन-सहन के विविध व्यवहारों से बना हुआ गुलदस्ता है। इस गुलदस्ते को तभी संजो कर रखा जा सकता है जब सभी समुदाय और लोग संविधान में दर्ज मूल्यों को सबसे ऊंचा दर्जा दें।

संविधान के प्रावधान और बहस

संविधान के प्रावधान बहस से परे नहीं हैं। उचित वजहों के साथ उन पर बहुत बहस हो सकती है। लेकिन सवाल यह है कि आखिर संविधान में दर्ज न्याय, बंधुता, लोकतंत्र, समता व स्वतंत्रता, जीवन के अधिकार के 'सिद्धांतों' को आज खारिज क्यों किया जा रहा है?

बीते दो दशकों से लगातार देश के संविधान और उसके बुनियादी स्वरूप को बदलने के प्रयास तेज हुए हैं। परंतु ऐसी कोशिशों पर जनता के बीच कभी कोई बहस नहीं छिड़ी।

हमारे समाज की विविधता ही इसकी खासियत है। इसमें तमाम तरह के विश्वास और नजरिये हो सकते हैं। यह विविधता ही भारत की शक्ति है।

नागरिकता बोध की कमी

देश में संवैधानिक मूल्यों को क्षति पहुंचने की एक बड़ी वजह यह है कि देश में नागरिकता बोध अपेक्षित ढंग से पैदा नहीं हुआ। संविधान को एक पवित्र किताब तो माना गया, लेकिन संवैधानिक मूल्यों को सरल सहज ढंग से आम नागरिकों तक नहीं पहुंचाया गया। हमारे सत्ता तंत्र और राजनीतिक दलों ने जीवन में मूल्यों के विकास पर जोर नहीं दिया। हमारे परिवार के बुजुर्गों ने जिस आग्रह के साथ धार्मिक किताबें पढ़ीं, अगर उसी शिद्दत से उन्हें संविधान पढ़ने के लिए

प्रोत्साहित किया गया होता तो आज देश में जागरुकता का स्तर तथा राजनीतिक माहौल दोनों ही अलग होते।

रही सही कसर 1990 के दशक में आयी आर्थिक उदारीकरण की नीति ने पूरी कर दी। हमने विकास की जो राह चुनी है, वह संवैधानिक मूल्यों की दिशा में नहीं जाती। चुनिंदा लोगों की आर्थिक प्रगति देश के लोगों की खुशहाली का मानक नहीं है। देश के 10 फीसदी लोगों के पास देश की 77 फीसदी संपत्ति है। कल्पना की जा सकती है कि इससे आर्थिक असमानता की कितनी गहरी खाई बनी है।

सच यह भी है कि संविधान की कोई आत्मा नहीं होती। उसकी आत्मा नागरिकों की आत्मा से बनती है। यदि नागरिक ही संवैधानिक सिद्धांतों से दूरी बना लें या उनकी उपेक्षा पर मौन रहें तो उम्मीदों का दम तोड़ना लाजिमी है।

संविधान संवाद पुस्तिका शृंखला

- संविधान और हम
- भारतीय संविधान की विकास गाथा
- जीवन में संविधान
- भारत का संविधान – महत्वपूर्ण तथ्य और तर्क
- संविधान निर्माण की पृष्ठभूमि
- संवैधानिक व्यवस्था : एक परिचय
- संविधान की रचना प्रक्रिया
- संविधान सभा में स्वतंत्रता का घोषणा पत्र
- संविधान की उद्देशिका से परिचय
- संविधान : मूल अधिकार और नीति निदेशक तत्व
- संविधान और रियासतें
- संविधान बोध और संवैधानिक नैतिकता
- भारत के संविधान के रोचक किस्से
- भारत का राष्ट्रीय ध्वज : तिरंगे की कहानी
- डॉ. बी.आर. अम्बेडकर और भारतीय संविधान
- गांधी का संविधान
- संविधान और आदिवासी
- स्वाधीनता, स्वतंत्रता और संविधान
- संविधान और समाजवाद तथा आर्थिक समानता
- संविधान और सांप्रदायिकता
- संविधान और चुनाव प्रणाली
- संविधान और न्यायपालिका
- संविधान और अल्पसंख्यक
- इंसानी व्यवहार में लोकतंत्र के होने का मतलब

पुस्तकें पाने के लिए संपर्क करें –
vikassamvadprakashan@gmail.com / 0755 - 4252789

'संविधान संवाद' शृंखला क्यों?

जब हम किसी विषय के बारे में अनभिज्ञ रहते हैं तो कोई फर्क नहीं पड़ता है लेकिन जब हम उसके बारे में जानना शुरू करते हैं तो फिर हर पहलू को टटोलने, जानने और समझने की आवश्यकता और ललक होती है।

भारतीय संविधान से जुड़ी तमाम जानकारियों को जानने की उत्कंठा के कारण ही 'विकास संवाद' ने 'संविधान संवाद शृंखला' आरंभ की है। इसका उद्देश्य संविधान की विकास गाथा को जानना, उसके उद्देश्य को समझना तथा तय लक्ष्यों की प्राप्ति में हम नागरिकों के कर्तव्यों के बोध की पहल करना है।

यह संवैधानिक मूल्यों के आत्मबोध से उन्हें आत्मसात करने तक की यात्रा है।

विकास संवाद

Azim Premji Foundation